IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 22, Issue 6, Ver. 1 (June. 2017) PP 75-79
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

जैन पुराणों में वस्त्र एवं वेशभूषा

डॉ प्रतिभा पाठक
एसोसिएट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास,
महाविद्यालय भटवली बाजार(उनवल)गोरखपुर।

सन्दर्भ
प्राचीन काल में प्रचलित वस्त्र एवं वेशभूषा का ज्ञान साहित्यिक एवं पुरातात्विक साक्ष्यों के माध्यम से उपलब्ध होता है। विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के वस्त्र एवं वेशभूषाएँ प्रचलित हैं। स्त्री, पुरुष, बच्चे, साधु सन्यासी भिक्षु आदि के वस्त्र एवं वेशभूषाओं में विभिन्नता मिलती है। ग्रामीण, नगरीय, जंगलीय पर्वतीय, तटवर्तीय इत्यादि क्षेत्रों के निवासियों के रहन–सहन एवं वेशभूषा में भी पर्याप्त अन्तर था। जैन पुराणों के रचनाकाल में सामान्यतः अधोलिखित वस्त्रों के प्रचलन का ज्ञान उपलब्ध होता है – कापसिक (सूती वस्त्र) और्ण (ऊनी वस्त्र), कीटज (सिल्क), रेशम, मखमल के वस्त्र, चर्म (चमड़े) के वस्त्र, बल्कल (वृक्षों की छालों के वस्त्र), पत्र (वृक्षों के पत्तों के वस्त्र) तथा धातु निर्मित वस्त्र। इन सभी प्रकार के वस्त्रों का उल्लेख हमारे जैन पुराणों में किसी न किसी रुप में हुआ है। आधुनिक युग में प्रचलित रासायनिक वस्त्रों का प्रचलन उस समय नहीं था।

परिचय

जैन साधु एवं साध्वियों की वेशभूषा में हम जैन धर्म के विकसित रुप अवलोकन करते हैं। प्रारम्भ में वे मोटे एवं रूक्ष वस्त्र केवल सामाजिक नियमों का पालन करने के लिए धारण करते थे, परन्तु शनैः–शनैः भारतीय संस्कृति की विशेषता के प्रभाव से तपः प्रधान जैन धर्म भी अछूता नहीं रह सका और उसे भी अपने वस्त्र सम्बन्धी कठोर नियमों को शिथिल करना ही पड़ा। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि दिगम्बर सम्प्रदाय में मुनियों के लिए वस्त्रों का निषेध है।[1] साधु–साध्वियाँ अपने गुहांग के आवरणार्थ वस्त्रों का प्रयोग करते थे। महापुराण जहाँ मनोज्ञ भेषभूषा पर अधिक बल दिया गया है वहीं विभिन्न शुभ अवसरों पर भेषभूषा की महत्ता पर अधिक बल दिया गया है।[2] वहीं सुगन्धित करने के लिए पवास चूर्ण का भी प्रयोग करते थे। पद्म पुराण के अनुसार वस्त्रों के सुरक्षार्थ सपाटल में रखते थे।[3] वस्त्रों पर सूती एवं रेशमी धागों से कढ़ाई भी किया जाता था। विभिन्न प्रकार के रंगों से रंग कर रंगीन वस्त्र निर्मित किये जाते थे। सूत के नाना प्रकार के उपकरणों का निर्माण करते थे। इस प्रकार की कला पद्य पुराण में उल्लेख उपलब्ध है।

वस्त्र एवं भेषभूषा के प्रकार एवं स्वरूप

पुरुषों द्वारा धार्य प्रधान वस्त्र उत्तरीय एवं अधोवस्त्र का उल्लेख पद्मपुराण में उपलब्ध है।[4] हरिवंश पुराण मे वस्त्रों के पाट चीन एवं दुकूल नाम से तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है।[5] पुराणों में अधोलिखित वस्त्रों एवं वेषभूषाओं का विस्तारशः वर्णन उपलब्ध है –

अंशुक[6] : निशीथ चूर्णी में उल्लिखित है कि अंशुक में तारबीन का काम होता था। अलंकारों में जरदोजी का काम एवं उनमें स्वर्ण के तार से चित्र–विचित नक्काशियाँ निर्मित की जाती थी।[7] बृहत्कल्पसूत्रभाष्य[8] की टीका में यह कोमल एवं चमकीला रेशमी वस्त्र वर्णित किया गया है। समराइच्चकहा[9] एवं आचारांग[10] में अंशुक का उल्लेख प्राप्य है। मोतीचन्द्र के कथनानुसार यह चन्द्रकिरण एवं श्वेत कमल के सदृश्य होता था।[11] बाण ने अंशुक को अत्यन्त स्वच्छ एवं झीनावस्त्र स्वीकार किया है।[12] वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार यह उत्तरीय वस्त्र था जिसके ऊपर कसीदा द्वारा अनेक भाँति के फूल निर्मित किये जाते थे।[13] रंगभेदानुसार अंशुक कई प्रकार के होते थे–जैसे, नीलांकुश, रक्तांशुक आदि।[14] इसी प्रकार बिनावट के आधार पर इसके भेद–एकांशुक, अध्यांशुक, द्वयांशुक तथा त्रयांशुक आदि हैं।[15] अंजुक वस्त्रों के अधोलिखित उपभेद मिलते हैं :–

शुकच्छायांशुक[16] : यह सुआ पंखी अर्थात् हलके हरे रंग का महीन रेशमी वस्त्र था।

स्तनांशुक[17] : यह 'अगिया' की भाँति का वस्त्र होता था। यह रेशमी का टुकड़ा होता था, जिसको स्तन पर सामने से ले जाकर पीछे पीठ पर गाँठ जाती थी। कालान्तर में इस स्तन–पट्ट भी कहा गया है। इसका प्रमाण गुप्लकालीन चित्रों में स्तन–पट्ट धारण किये हुए स्त्रियों के चित्रण से उपलब्ध होता है।

उज्ज्वलांशुक[18]**:** इस प्रकार के रेशमी वस्त्रों को स्त्रियाँ साड़ी की भाँति धारण करती थीं।

सदंशुक : यह स्वच्छ, श्वेत, सूक्ष्म एवं स्निग्ध रेशमी वस्त्र होता था। तीर्थंकर भी इसको धारण करते थे।

पटांशुक : महीन, धवल एवं सादे रेशमी वस्त्र की संज्ञा पटांशुक थी।[19] समराइचकहा में इसको पटवास वर्णित किया गया है।[20] यह सूती एवं सस्ता वस्त्र था। इसकी अपेक्षा पटांशुक बहुमूल्य वस्त्र था।

क्षोम[21] **:** यह अत्यन्त महीन एवं सुन्दर वस्त्र था। यह अलसी की छाल–तन्तु से निर्मित होता था।[22] वासुदेव शरण अग्रवाल के विचारानुसार यह असम एवं बंगाल में उत्पन्न होने वाली एक प्रकार की घास से निर्मित किया जाता था।[23] काशी और पुण्ड्रदेश का क्षौम प्रसिद्ध था।[24]

कंचुक : साम्यता चोली या अंगिया से कर सकते हैं। गान्धार कला में स्त्रियों को साड़ी के ऊपर या नीचे कंचुक धारण किये हुए प्रदर्शित किया गया है।[25]

यह लम्बा एवं कसा हुआ होता था। इस पर सिलवटें पड़ी रहती थीं।[26] कंचुक धारण करती थीं। नागार्जुनीकोण्डा और अमरावती की कला में कंचुक चित्रण उपलब्ध है।[27]

चीनपट[28] **:** निशीथ में उल्लिखित है कि बहुत पतले रेशमी वस्त्र या चीन निर्मित रेशमी वस्त्र को चीनांशुक या चीनपट कहते हैं।[29] प्रथम सती ई0 पर द्य भारतीय वणिक् मध्य एशिया में व्यापार करते थे और वहाँ से वे चीनी–रेशमी वस्त्र का भी व्यापार करते थे।[30] बृहत्कल्पभाष्य में इसका वर्णन चीनी के महीन रेशमी द्व वस्त्र के रुप में उपलब्ध है।[31]

प्रावार[32] **:** वर्तमान कालीनदुशाले से इसकी साम्यता परिलक्षित होती है। हेमचन्द्र ने अपने ग्रन्थ में राजाच्छादनाः प्रावराः का प्रयोग किया है।[33] इससे स्पष्ट हो जाता है कि राजाओं के ओढ़ने–बिछाने योग्य ऊनी या रेशमी वस्त्र हेतु प्रावार (चादर) शब्द प्रयुक्त हुआ है। निशीथ में नीलगाय के चर्म से निर्मित चादरार्थ प्रावार शब्द प्रयुक्त हुआ है।[34] अमरकोश में दुप्पट्टे एवं चादर हेतु पाँच शब्द–प्रावार, उत्तरासंग, वृहतिका, संव्यान और उत्तरीय–उपलब्ध है।[35]

उष्णीष[36] **:** उष्णीष शब्द का प्रयोग पगड़ी या साफा के अर्थ में सर्वप्रथम अथर्ववेद में हुआ है। इसका प्रचलन वैदिक काल में हो चुका था। शतपथब्राह्मण में वर्णित है कि यज्ञ के अवसर पर यजमान उष्णीष धारण करते थे।[37] रघुवंश में अलक, शिरसवेष्ठत शिरस्त्रजाल शब्द उष्णीपार्थ प्रयुक्त हुए हैं। मिथुन मूर्ति पुरूपाकृति उष्णीप धारण किये श्रृंगार–सज्जित अवस्था में एक स्थल पर नागार्जुनीय कोण्डा कला में अंकित है।[38]

चीवर[39] **:** यह बौद्ध भिक्षुओं का परिधान है। प्रारम्भिक ब्रह्मचारी एवं श्रमण चीवर धारण करते थे।[40] यह पीतवर्ग के रेशमी वस्त्र से निर्मित किया जाता था। मोतीचन्द्र ने अपने ग्रन्थ प्राचीन भारतीय वेश–भूषा में बौद्ध भिक्षुओं के प्रयोगार्थ तीन वस्त्रों का उल्लेख किया है–(1) संघाटी : कमर में लपेटने की दोहरी लुंगी, (2) अन्तर वासक–ऊपरी भागढकने का वस्त्र और (3) उत्तरासंग–चादर।

परिधान[41]**:** यह एक प्रकार अधोवस्त्र होता था। परिधान शब्द से धोती का बोध होता है।

कम्बल : कम्बल का प्राचीनतम उल्लेख अथर्ववेद में उपलब्ध है।[42] इसका प्रयोग सभी लोग करते थे। इसका प्रयोग रथ के पर्दे के निर्माण में भी होता था।[43] ह्वेनसांग के अनुसार यह भेड़–बकरी के ऊन से निर्मित और मुलायम एवं सुन्दर होता था।[44]

रंग–बिरंगे कपड़े[45] **:** विभिन्न प्रकार के रंगीन वस्त्रों के प्रयोग का प्रचलन था।

उपसंव्यान[46] **:** यह शब्द धोती का बोधक है। अमरकोश में और पर्यावार्थक चार शब्द–अंत्तरीय, उपसंव्यान, परिधान और अधोंशुक–उपलब्ध है।[47]

वल्कल[48] : वैदिक काल से इसका प्रयोग प्रचलित है। आश्रमवासी, तपसी एवं साधु वल्कल धारण करते थे।[49] मोती चन्द्र ने छाल के वस्त्र को वल्कल वर्णित किया है। बौद्ध भिक्षुओं के लिए इस प्रकार के वस्त्र भी अविहित थे। बाणभट्ट के वल्कल वस्त्र का प्रयोग उत्तरीय और चादर के लिए किया है।[50] हर्षचरित बाणभट्ट ने सावित्री को कल्पद्रुम की छाल–निर्मित वल्कल वस्त्र धारण किये हुए उल्लेख किया है।

दुष्यकुटी या देवदूष्य[51] : इसका मुख्यतः प्रयोग तम्बू के निर्माणार्य किया जाता था। इसके अतिरिक्त इससे चादर एवं तकिया भी निर्मित होता था। वासुदेव शरण अग्रवाल के मतानुसार स्तूप पर चढ़ाये जाने वाले बहुमूल्य वस्त्र देवदूष्य कहलाते थे।[52] भगवतीसूत्र में देवदूष्य को एक प्रकार का दैवी वस्त्र कथित है, जिसे भगवान् महावीर ने धारण किया था।[53]

दुकूल[54] : निशीथचूर्णी में वर्णित है कि दुकूल का निर्माण दुकूल नामक वृक्ष की छाल को कूटकर उसके रेशे से करते थे।[55] यह श्वेत रंग का सुन्दर एवं बहुमूल्य वस्त्र होता था। गौड़देश (बंगाल) में उत्पादित एक विशेष प्रकार के कपास से निर्मित होता था। दुकूल वस्त्र का वर्णन, आचारांगसूत्र में उपलब्ध है।[56] वासुदेव शरण अग्रवाल के विचार से सम्भवतः कूल का तात्पर्य देशज या आदिम भाषा में कपड़ा से था, जिससे कोलिक (कोली) शब्द बना है। दोहरी चादर या थान के रूप में विक्रयार्थ आने के कारण यह द्विकूल या दुकूल नाम से सम्बोधित होने लगा।[57] वाण ने दुकल से निर्मित उत्तरीय, साड़ियाँ, पलंगपोश, तकिया के गिलाफ आदि का उल्लेख किया है।

कुशा के वस्त्र : साधु लोग अपने सुह्यांग के आवरणार्थ कुश, चीवर एवं कमों की छालों को प्रयुक्त करते थे।[58] इससे यह ज्ञात होता है कि कुश को कूटकर वस्त्र निर्मित करते थे।

वासत्[59] : ऋग्वेद एवं कालान्तर के साहित्य में धारणीय वस्त्र हेतु वासस्।[60] शब्द प्रचलित था। कपड़े के लिए वासस, वसन एवं वस्त्र शब्द प्रयुक्त हुए हैं। अमरकोश में कपड़े के छः पर्यायवाची शब्द–वस्त्र, आच्छादन, वास, चेल, वसन एवं अंशुक–प्राप्य हैं।[61]

कुसुम्भ[62] : यह लाल रंग का सूती और रेशमी वस्त्र होता था। सम्भवतः गरीब लोग सूती कुसुम्भ का प्रयोग करते थे और धनी लोग रेशमी वस्त्र का।

नेत्र[63] : नेत्र वृक्ष–विशेष की छाल से रेशमी वस्त्र निर्मित होता था। हरिवंश पुराण में इसके लिए महानेत्र शब्द प्रयुक्त हुआ है।[64] कालिदास ने सर्वप्रथम नेत्र का उल्लेख किया है।[65] बाणभट्ट ने कई स्थलों पर नेत्र–निर्मित वस्त्रों का चित्रांकन किया है।[66]

सन्दर्भ सूची :–

1. मोती चन्द्र–प्रथम भारतीय वेशभूषा, प्रयाग सं0 2007 भूमिका पृ0 20
2. महा 5/276, 17/211
3. पद्म 27/32
4. पद्म 45/67
5. हरिवंश 7/87
6. पद्य 3/198 महा 10/181, 15/23
7. निशीय 4, पृ0 467
8. वृहत्कल्पूसत्रभाष्य 4/36–61
9. समराइच्चकहा 1, पृ0 74
10. आचारांग 2, 5, 1, 3
11. मोती चन्द्र–वही, पृ0 55
12. बासुदेव शरण अग्रवाल हर्ष, चरित्र एक सांस्कृतिक अध्ययन पृ0 78
13. पद्म 3/198
14. महा0 10/181, 11/133, 12/30, 15/23
15. मोती चन्द्र–वही, पृ0 55
16. महा 9/53

17. महा 8/8/, 12/176
18. महा 7/142
19. मोती चन्द्र–वही, पृ0 95
20. वासुदेव शरण अग्रवाल–हर्षचरितः एक सांस्कृतिक अध्ययन पृ0 76
21. महा 12/173
22. मोती चन्द्र–वही, पृ0 5
23. बासुदेव शरण अग्रवाल, हर्षचरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ0 76
24. मोतीचन्द्र–वही, पृ0 9
25. पद्म 2/46
26. मोतीचन्द्र–वही, पृ0 109–110
27. सिद्धेश्वरी नारायण राय–पौराणिक धर्म एवं समाज, पृ0 296
28. महा9/48, हरिवंश 7/87, 11/121
29. निशीथ 47, पृ0 467, तुलनीय–आचारांग 2/14/6 भगवती सूत्र 9/33/9
30. सर आरल स्टाइन–एशिया मेजदा हर्थ एनिवर्सरी, वाल्यूम 1923, पृ0 367–372
31. बृहत्कल्प सूत्र 4/36/62
32. महा 9/48, आचारांग 2/5/1–8
33. हेमचन्द्र का व्याकरण 3/4/41
34. निशीय 47, पृ0 467
35. अमरकोश 2/6/117–118
36. महा 10/178
37. मोतीचन्द्र–वही, पृ0 19
38. सिद्धेश्वरी नारायण राय–पौराणिक धर्म एवं समाज, पृ0 297
39. महा 1/14, हरिवंश 9/115, महावग्य 8/9/14 में खोम, कप्पासिका, कोसेय्य, साण तथा भंग नामक चीवरों का उल्लेख है।
40. हेमचन्द्र का व्याकरण 3/3/3
41. महा 9/48
42. अथर्ववेद 14/2/66–67
43. हेमचन्द्र का व्याकरण 6/2/132
44. वाट्र्स आन युवान च्वांग 1, पृ0–148
45. हरिवंश 11/121
46. महा 13/70
47. अमरकोश 2/6/117
48. महा 1/7 पद्य 3/296, हरिवंश 9/115
49. अभिज्ञानशाकुन्तलम, अंक 1,19 पृ0 13, कुमारसम्भव 6/92 समराइच्चकहा 7, पृ0 645
50. हर्षचरित, 1, पृ0 34, कादम्बरी पृ0 311, 323
51. महा 8/161, 27/24, 37/153
52. बासुदेव शरण अग्रवाल–वही, पृ0 75
53. भगवती सूत्र 15/1/541
54. पद्म 7/171, हरिवंश 7/87, 11/129, महा 6/66, 9/24, 11/27
55. निशीथचूर्णी 7, पृ0 10–12
56. 'दुकूल' गौड विषय विशिष्ट कार्यासिकम आचारांग 2/5/13
57. बासुदेव शरण अग्रवाल, वही, पृ0 76
58. कुशचीवरवलकलै : हरिवंश 09/115, पद्य 3/297
59. पद्म 3/293
60. मोती चन्द्र–वही, पृ0 15
61. अमरकोश 2/6/215
62. महा 3/188

63. महा 43/211
64. हरिवंश 11/121
65. रघुवंश 7/29
66. हर्षचरित, पृ0 31, 72, 143